ORIGINAL RESEARCH PAPER

Political Science

KEY WORDS:

हमारे देश में बाल–श्रम के गंभीर दुष्परिणाम

डॉ0 नरेश कुमार राजनीतिशास्त्र विभाग, बी0एन0एम0यु0, मधेपुरा, बिहार

बचपन, जिंदगी का बहुत ही खूबसूरत सफर होता है। बचपन में न कोई चिंता होती है, न कोई फिक्र होती है, एक निश्चिंत जीवन का भरपूर आनंद ही बचपन होता है। बच्चे राष्ट्र के भविष्य होते हैं, आज का बच्चा कल का नागरिक है। लेकिन मैं इन जुमलों की निरर्थकता पर मर्माहत होकर कभी–कभी सोचता हूँ कि हमारे समाज के वर्तमान कर्णधार करनी और कथनी में दोहरा मापदण्ड अपनाकर दोगली भाषा क्यों बोलते हैं? अन्यथा जिस गति से भारत के विभिन्न क्षेत्रों में आजादी के पूर्व से लेकर आज तक लाखों बच्चे तमाम तरह के शोषण के शिकार हो रहे हैं, उनके विरूद्ध सभी तबकों द्वारा एक महान क्रांति अथवा कम–से–कम जन–आन्दोलन की शुरूआत काफी पहले ही हो जानी चाहिए थी, किन्तु क्रांति और जन–आन्दोलन की बात कौन करे, हर क्षेत्र में, हर तबके में बच्चों के प्रति सहानुभूति एवं संवेदना अभिव्यक्त तक नहीं की जाती।

जिन बच्चों की ओर मेरा इशारा है, उन्हें समाज के तथाकथित ठेकेदार बाल–मजदूर की संज्ञा देते हैं। कहीं–कहीं तो इन बच्चों के परिवार द्वारा दिए गए नाम गुमनामी के अन्धकार में लुप्त हो गए हैं और इन्हें इनके लिंग के आधार पर मात्र 'ए लड़का' या 'ए लड़की' अथवा उनके कद या शारीरिक गठन के हिसाब से 'छोटू' या 'मोटू', 'नाटे' आदि नामों से पुकारा जाता है। यानी इन बच्चों से हम लोगों ने न सिर्फ इनका बचपन छीन लिया है बल्कि उन्हें अपना प्यारा– सा नाम रखने के अधिकार से वंचित कर दिया है क्योंकि हमारे देश के ये तमाम बच्चे अल्पायु में ही अपने बचपन को गिरवी रखकर कागज के चन्द टूकड़ों से खरीद लिये जाने पर बंधुआ बनकर उत्पादन की विभिन्न प्रक्रियाओं से अपने को जोड़ लेते हैं और उनके भार से वे इतन दब जाते हैं कि जवानी का एहसास किए बिना बचपन से सीधे बुढ़ापे में पहुँच जाते हैं। फिर बचपन भी कहाँ? जिन बच्चों के हाथों में खिलौने, कागज–कलम, कॉपी–किताब, स्लेट–पेंसिल होनी चाहिए थी, उनके हाथों में औरों के जूते पॉलिश करने के ब्रश, दूसरों के पढ़ने के लिए स्लट–निर्माण की सामग्रियाँ, पत्थर तोड़ने के हथौड़े अथवा दरी–कालीन बुनने के लिए धागों का जाल होता है जिसके मकड़जाल में उनकी जिन्दगी पिसती रहती है। जिन बच्चों को माँ–बाप की गोद में होना चाहिए था या भाई–बहन की बाँहों में जिनका दुलार होना चाहिए था, वे भयंकर शीतलहरी, तपती दोपहरी और घनघोर वर्षा के थपेड़ों के शिकार होते हैं। वे मिट्टी के दीये या मोमबत्ती जलाकर दीवाली नहीं मनाते बल्कि अपना बचपन सुलगाकर, उँगलियाँ जलाकर अमीर बच्चों की दीवाली के उत्सव के लिए पटाखे या मोमबत्ती बनाते हैं। उनका 'अपना उत्सव' नहीं होता बल्कि दूसरे के उत्सव के लिए वे अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देते हैं। फुटपाथों और नुक्कड़ों से लेकर होटलों, दुकानों, प्रतिष्ठानों और कारखानों में काम करने वाले संघर्षशील बच्चे खुद काली कोठरी में रहकर दूसरों को रोशनी देने के लिए माचिस बनाते हैं। बड़े लोगों के लिए बहुमूल्य दरी–कालीन बुनने वाले इन बच्चों को अढ़ने–बिछाने के लिए चिथड़े भी मयस्सर नहीं होते। जिन बच्चों को खेलने के लिए बगीचों की हरियाली और खुले आकाश के नीचे साफ–सुथरे मैदान तथा पढ़ने के लिए उपयोगी नसीब होने चाहिए थे, वे सिर्फ होटलों के जूठन, मोटर गैरेजों की कालिखों और कारखानों की चिमनियों के धुएँ में मरने के लिए अस्थायी रूप से जीने को मजबूर होते हैं और जिन्हें परिवार, समाज और सरकार उपेक्षित करने से बाज नहीं आती। वे मर– मर कर जीते हैं।

बाल–श्रमिकों को जोखिमपूर्ण एवं खतरनाक उद्योगों एवं उत्पादन–प्रक्रियाओं में लगे रहने के कारण नाना प्रकार की बीमारियों का शिकार हाना पड़ता है। हालाँकि कुछ विचारकों का यह मानना है कि सभी तरह के कार्य बच्चों के लिए खतरनाक नहीं होते, अथवा बच्चों के लिए काम लाभप्रद हो सकते हैं, अथवा कामकाजी बच्चे न काम करने वाले बच्चों की अपेक्षा ज्यादा तन्दुरूस्त होते हैं, क्योंकि वे अपनी कमाई से अपने भोजन का जुगाड़ कर लेते हैं। किन्तु दूसरी तरफ यह भी सच है कि अधिकांश बाल–श्रमिकों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव काम की प्रकृति एवं परिस्थितियों के कारण होता है। इसके अलावा बच्चों का शरीर इतना हष्ट–पुष्ट नहीं होता कि वे भारी बोझा उठा सकें या जलती भट्ठियों की आँच सह सकें। भिन्न–भिन्न उद्योगों/व्यवसायों एवं उत्पादन–प्रक्रियाओं में काम करने से बच्चों में भिन्न–भिन्न तरह के बीमारियाँ उत्पन्न होती है।

इसके आलावा परिवेशगत अव्यवस्थाओं के कारण भी बाल–श्रमिकों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यद्यपि बाल–श्रमिक (प्रतिषेध एव विनियमन) अधिनियम 1986 की धारा 13 के तहत केन्द्र और राज्य सरकार को किसी प्रतिष्ठानों या व्यवसाय में काम करने वाले बच्चों के स्वास्थ्य एवं सुरक्षा के लिए नियमावली बनाने का अधिकार है यानी काग्र स्थल, सफाई, रद्दी के निष्पादन, रोशनदान एवं तापमान, धूल एवं धुआँ, कृत्रिम नमी, प्रकाश, पीने के पानी, शौचालय एवं मूत्रालय, थूकदान, मशीनों की घेराबन्दी, खतरनाक मशीनों में लगे बच्चों का प्रशिक्षण एवं पर्यवेक्षण, बिजली काटने की पद्धिति, स्वचालित मशीनों, सीढ़ी तथा पहुँच के साधन की व्यवस्था, गड्ढे तथा अत्यधिक भार के बारे में, आँखों की सुरक्षा, ज्वलनशील गैस एवं धुआँ से सुरक्षा, आग से सावधानी, भवन का रख–रखाव आदि पर नियम बनाने का अधिकार है। किन्तु अधिकांश राज्यों में बाल–श्रमिक नियमावली बनी ही नहीं है ओर जिन राज्यों में बनी भी है (जबकि अधिनियम 1986 में ही पारित हो गया था) वहाँ भी उन नियमों का कड़ाई से पालन नहीं किया जाता है, जिसके फलस्वरूप बाल–श्रमिकों के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पड़ता है। उदाहरणार्थ, पर्याप्त सुविधाएँ न होना, काम के घण्टे अधिक होना तथा बच्चों का शरीर कोमल होने के कारण कीमती पत्थर पॉलिश, हीरा–जवाहरात कटाई, कालीन–बुनाई, जरी आदि कार्यों में लगे बाल–श्रमिकों की आँखें खराब हो जाती हैं। इसके अलावा जिन व्यवसायों, यथा–बीड़ी, अगरबत्ती आदि में पीस रेट पर भुगटान किया जाता है, वहाँ कम मजदूरी–दर होने के चलते बाल–श्रमिक अधिक–से–अधिक उत्पादन के लिए अपना जी–जान लगा देते हैं जिसका कुप्रभाव उनके स्वास्थ्य पर पड़ता है।

इसके अलावा यह भी देखा गया है कि यदि बाल–श्रमिकों द्वारा किया गया कार्य गैर–खतरनाक कोटि का है, तो भी वयस्कों की अपेक्षा बच्चों का शोषण अधिक किया जाता है। घरेलू नौकरों, छोटे–छोटे होटलों या ढाबों आदि के काम करने वाले बच्चों को नियोजकों द्वारा काफी प्रताड़ित किया जाता है और उनसे इतने गंदे कार्य कराए जाते हैं कि उनके कोमल हाथों की उँगलियों पर बुरा असर पड़ता है। इतना ही नहीं, इन नादान बच्चों को असामाजिक तत्व भी तरह–तरह से प्रताड़ित करते हैं और खासकर उनका यौन शोषण करके उन बाल–श्रमिकों को बीमारियाँ दे देते हैं। मुरादाबाद के पीतल उद्योग में पॉलिश करने वाले बच्चों की मृत्यु जल्दी होती है। जैसा कि एक कामगार ने सूचित किया–"मैं क्या कहूँ हर परिवार के एक या दो किशोर या जवान बेटे अपनी जान गवाँ चुके हैं। अब हम लोगों ने स्वीकार करना शुरू कर दिया है। मुरादाबाद में यह भी पाया गया कि टी.बी. रोग से ग्रस्त अधिकांश लोगों में पीतल उद्योग में लगे मजदूर ही होते हैं। उत्तर प्रदेश के दो सबसे ज्यादा टी. बी. रोग ग्रस्त शहरों में मुरादाबाद एक है। वहाँ के चिकित्सकों ने यह भी बताया कि टी. बी. की बीमारी का लक्षण पहचान लिये जाने के बाद भी वे मरीज मजदूर पुनः उन चिकित्सकों के पास नहीं आते जो उन्हें पहले यह सलाह दिए होते हैं कि वे मजदूर अपना व्यवसाय बदल दें तथा अपनी खुराक में सुधार करें क्योंकि वे मजदूर ये दोनों चीजें करने में असमर्थ होते हैं। यही वजह है कि वहाँ लगे मजदूरों में बुढ़ापा जल्दी आता है और कइयों की मृत्यु 30–40 वर्ष में हो जाती

है। इसी प्रकार चीनी मिट्टी का बर्तन बनाने वाले खुर्जा के मजदूरों टी. बी. और दमा की बीमारी ज्यादा पाई जाती है। खुर्जा सरकारी अस्पताल में 300 टी. बी. मरीजों में से 70 प्रतिशत चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने वाले मजदूर हैं। इसके अलावा गैर–सरकारी अस्पतालों में इलाज कराने वाले करीब 700 ऐसे मरीज हैं तथा मिट्टी–बर्तन उद्योग में लगे हर 10 बाल–श्रमिकों में से कम–से–कम एक को पुलमोनरी टी. बी. की बीमारी होती है।

इसके अलावा शोर करने वाली मशीनों पर काम करने वाले बच्चे प्रायः बहरे हो जाते हैं और धूल की वजह से उन्हें नजला हो जाता है। मिट्टी–बर्तन बनाने में सिलिका का बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है जो स्वास्थ्य के लिए नुकसानदायक है।

अलीगढ़ में ताला उद्योग में लगे बाल–श्रमिकों, खासकर पॉलिश करने वालों से सीने की बीमारी खासकर टी. बी. अक्सर हो जाती है। इसी प्रकार ताला उद्योग में एलेक्ट्रोप्लेटिंग इकाई में लगे मजदूरों में निमोनिया की बीमारी ज्यादा होती है, फिर भी उसकी चिकित्सा की समुचित व्यवस्था नहीं है। धूल के कणों की वजह से फेफड़े कमजोड़ हो जाते हैं जिससे मनुष्य की कार्य करने की क्षमता घट जाती है। किन्तु दुर्भाग्यवश न तो नियोजकों की ओर से और न सरकार की ओर से इन बीमारियों की गहन एवं नियमित चिकित्सा की सुविधा उपलब्ध है।

चूड़ी उद्योग में लगे बच्चों को उन भट्ठियों पर काम करना पड़ता है जिसका तापमान 1800 डिग्री सेल्सियस तक पहुँ जाता है। इसके अलावा वहाँ बहुत तेज आवाज होती है। अत्यधिक गर्मी, मशीनों की आवाज एवं धूल के कारण अधिकांश मजदूर टी. बी. के शिकार हो जाते हैं और उनकी जिन्दगी 10–15 वर्ष कम हो जाती है। इसका नतीजा यह होता है कि फिरोजाबाद चूड़ी उद्योग में लगे अधिकांश मजदूर 30–35 वर्ष तक के होते ही काम करने लायक नहीं रह जाते तथा उन्हें भूखे से मरने से बचने के लिए अपने बच्चों के काम पर निर्भर रहना पड़ता है। इस प्रकार बाल–श्रम का अनन्त सिलसिला चलता रहता है।

संदर्भ

1. *बल–श्रम (निषेध व वियमन) कानून 1986.*
2. *भारतीय संवधान।*
3. *विभिन्न जिलों के भ्रमण एवं साक्षात्कार से प्राप्त रिपोर्ट।*
4. *विभिन्न समाचार पत्रों से प्राप्त स्त्रोत।*
5. *चाइल्ड लेबर एण्ड द नेचर ऑव ओकुलर मोबीडिटीज प्रेसीपिटेटिंग प्रॉब्लम फार आई हेल्थ केयर (एस.बी. दयाल)।*